दैनिक भास्कर

Date: 08-08-26

प्रजातंत्र में 'संवाद' की जरूरत पर जरूरी हस्तक्षेप

संपादकीय

संघ प्रमुख का युवाओं के साथ एक इंटरव्यू में उनकी समस्याओं, उनके आंदोलन का तरीका और उनकी देशभक्ति पर मुहर लगाना युवाओं ही नहीं आम जनता को भी अच्छा लगा है। संघ प्रमुख ने युवाओं को पुरानी पीढ़ी से ज्यादा ईमानदार और राष्ट्रभक्त बताया। उनका यह कहना कि संवाद किसी भी प्रजातंत्र में जरूरी है, सरकार के लिए एक बड़ी नसीहत है। संघ प्रमुख ने सरकारी नेतृत्व को युवाओं की वास्तविक समस्याओं के प्रति नजरिया बदलने को कहा। उन्होंने कहा कि नेतृत्व केवल भाषण देकर चुनाव जीतना मात्र नहीं है। उनका यह कथन उस समय आया है, जब युवाओं के संगठन सीजेपी ने राष्ट्रव्यापी 'क्या बोलती पब्लिक' अभियान शुरू किया है, जिसमें जनता के बीच शिक्षा सुधार, बढ़ती बेरोजगारी और मीडिया की विश्वसनीयता के मुद्दों को लाया जाएगा। यानी जेन जी अपने आंदोलन को अभी और विस्तार देने जा रही है। उधर राहुल गांधी ने भी प्रयागराज में रैली की घोषणा की है और विपक्षी दलों से ज्यादा से ज्यादा सांसदों को बिहार के सिवान जिले में भेजकर युवाओं की स्थिति का ज्याजा लेने का आह्वान किया है। गौरतलब है कि इस जिले में आंदोलनकारी युवाओं के साथ भारी पुलिस बलप्रयोग से दर्जनों युवा घायल हुए थे। प्रयागराज भी प्रतियोगी परीक्षाओं का केंद्र रहा है। संघ प्रमुख के भाव युवा आंदोलन को बल देने वाले हैं।

दैनिक जागरण

Date: 08-08-26

पुलिस को भी है प्रतिकार का अधिकार

अशोक कुमार, (लेखक उत्तराखंड के पुलिस महानिदेशक रहे हैं)

हाल में दिल्ली के जंतर-मंतर पर काकरोच जनता पार्टी यानी सीजेपी के नेतृत्व में हुए आंदोलन के दौरान पुलिस द्वारा कथित रूप से पैलेट गन के प्रयोग को लेकर पूरे देश में व्यापक बहस छिड़ गई है। घटना की जांच भी

प्रारंभ हो चुकी है। सवाल यह है कि पैलेट गन का प्रयोग हुआ या नहीं? यदि हुआ तो किन परिस्थितियों में हुआ? किंतु इस पूरे विवाद के बीच एक महत्वपूर्ण पक्ष लगभग चर्चा से बाहर है कि ऐसी परिस्थितियों में पुलिस को कानून क्या अधिकार देता है? मैंने अनेक बार ऐसे हालात देखे हैं, जब कुछ ही मिनटों में शांतिपूर्ण प्रतीत होने वाला प्रदर्शन हिंसक रूप धारण कर लेता है। ऐसे समय में पुलिस के प्रत्येक निर्णय का सीधा संबंध लोगों के जीवन, सार्वजनिक संपत्ति और कानून-व्यवस्था से होता है। इसलिए किसी भी घटना का मूल्यांकन केवल भावनाओं के आधार पर नहीं, बल्कि कानून और वास्तविक परिस्थितियों के आधार पर किया जाना चाहिए।

प्रत्येक नागरिक को शांतिपूर्ण ढंग से विरोध दर्ज कराने का संवैधानिक अधिकार प्राप्त है, लेकिन यह अधिकार असीमित नहीं है। जब कोई प्रदर्शन हिंसा, आगजनी, तोड़फोड़, पथराव अथवा सार्वजनिक व्यवस्था के लिए गंभीर खतरा बन जाता है, तब राज्य का संवैधानिक दायित्व है कि वह कानून-व्यवस्था बहाल करे। पूर्व में भारतीय दंड संहिता यानी आइपीसी की धारा 141 में गैर-कानूनी जमावड़े की परिभाषा दी गई थी। अब यह प्रविधान भारतीय न्याय संहिता यानी बीएनएस की धारा 189 में निहित है। यदि पांच या उससे अधिक व्यक्ति किसी ऐसे उद्देश्य से एकत्र हों, जो कानून के विरुद्ध हो, तो वह गैर-कानूनी जमावड़ा माना जाएगा। इसमें सरकार के वैधानिक कार्यों में बाधा डालना, अपराध करना, सार्वजनिक अथवा निजी संपत्ति को नुकसान पहुंचाना, बलपूर्वक किसी की संपत्ति पर कब्जा करना अथवा किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य करने के लिए विवश करना शामिल हो सकता है। भारतीय न्याय संहिता की धाराएं 189, 190 और 191 ऐसे गैर-कानूनी जमावड़े तथा दंगों में शामिल व्यक्तियों के लिए दंड का प्रविधान करती हैं। केवल हिंसा करने वाला व्यक्ति ही नहीं, बल्कि जानबूझकर ऐसे हिंसक जमावड़े का हिस्सा बने लोग भी कानूनी दायरे में आते हैं।

अब प्रश्न यह है कि ऐसी स्थिति में पुलिस क्या करे? इसका उत्तर भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता यानी बीएनएसएस की धाराओं 148 से 151 में मिलता है, जिन्होंने पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) की धाराओं 129 से 131 का स्थान लिया है। व्यवस्था के अनुसार कानून पुलिस को चरणबद्ध तरीके से कार्रवाई करने का अधिकार देता है। सबसे पहले उपनिरीक्षक या उससे वरिष्ठ अधिकारी किसी भी गैर-कानूनी जमावड़े अथवा शांति भंग करने की आशंका वाले समूह को तितर-बितर होने का आदेश दे सकता है। यदि भीड़ आदेश का पालन नहीं करती तो उसे हटाने के लिए पुलिस आवश्यक बल का प्रयोग कर सकती है, जिसमें आवश्यकता पड़ने पर गिरफ्तारी भी शामिल है। कानून पुलिस को केवल उतना ही बल प्रयोग करने की अनुमति देता है, जितना परिस्थितियों में आवश्यक हो। इसे ग्रेडेड रिस्पांस कहा जाता है। इसका अर्थ है कि पुलिस सीधे कठोर बल का प्रयोग नहीं करती। पहले समझाइश, सार्वजनिक घोषणा और चेतावनी दी जाती है। यदि उससे भी स्थिति नियंत्रित न हो तब वाटर कैनन, आंसू गैस तथा अन्य गैर-घातक उपाय अपनाए जाते हैं। आवश्यकता पड़ने पर सीमित लाठीचार्ज किया जा सकता है। इसके बाद भी यदि भीड़ हिंसक बनी रहे और लोगों के जीवन अथवा सार्वजनिक संपत्ति के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करे, तभी रबर बुलेट, प्लास्टिक पैलेट अथवा पंप-एक्शन एंटी-रायट गन जैसे विशेष उपकरणों का प्रयोग किया जा सकता है। इन उपकरणों का उद्देश्य किसी व्यक्ति की जान लेना नहीं, बल्कि हिंसक भीड़ को नियंत्रित करना और ऐसी स्थिति से बचना है, जहां वास्तविक गोलियों का प्रयोग करना पड़े। फिर भी, इनका

उपयोग केवल प्रशिक्षित अधिकारियों द्वारा निर्धारित एसओपी के अनुसार ही किया जाना चाहिए। यदि इन उपायों के बाद भी स्थिति नियंत्रण से बाहर हो जाए, तभी कानून विशेष परिस्थितियों में सशस्त्र बलों की सहायता लेने की अनुमति देता है। सामान्यतः ऐसी कार्रवाई कार्यपालक मजिस्ट्रेट के निर्देशन में की जाती है। यदि किसी आपात स्थिति में मजिस्ट्रेट उपलब्ध न हो, तो कानून वरिष्ठतम उपनिरीक्षक अथवा उससे उच्च अधिकारी तथा सशस्त्र बलों के राजपत्रित अधिकारी को भी आवश्यक परिस्थितियों में आग्नेयास्त्रों के प्रयोग का आदेश देने का अधिकार प्रदान करता है। पैलेट आधारित भीड़ नियंत्रण प्रणाली भारत में लगभग दो दशकों से प्रचलन में है। जम्मू-कश्मीर में लंबे समय तक चले हिंसक पथराव के दौरान इसका उपयोग व्यापक चर्चा का विषय बना। व्यावहारिक दृष्टि से यह भीड़ नियंत्रण के सामान्य उपायों और घातक हथियारों के बीच का एक मध्यमार्गी विकल्प माना जाता है। स्पष्ट है कि कानून पुलिस को हिंसक एवं गैर-कानूनी भीड़ के विरुद्ध बल प्रयोग का अधिकार देता है। हालांकि बल का प्रयोग सदैव न्यूनतम, आवश्यक, अनुपातिक तथा अंतिम विकल्प के रूप में ही किया जाए। पुलिस का उद्देश्य नागरिकों को पराजित करना नहीं, बल्कि कानून का शासन स्थापित करते हुए शांति, जन-जीवन और सार्वजनिक सुरक्षा की रक्षा करना है।

पुलिस अधिकारी के लिए दंगा नियंत्रण कभी आसान निर्णय नहीं होता। ऐसी परिस्थितियों में यदि पुलिस निष्क्रिय रहे तो वही समाज उससे पूछता है कि उसने अपनी जिम्मेदारी क्यों नहीं निभाई। फिर भी, यदि कोई अधिकारी कानून की सीमा से बाहर जाकर कार्य करता है, तो उसके विरुद्ध कार्रवाई के भी पर्याप्त प्रविधान हैं। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि पुलिसकर्मी भी इसी समाज का हिस्सा हैं। वे भी परिवार वाले नागरिक हैं, जो संविधान और कानून के प्रति अपनी शपथ का निर्वहन कर रहे होते हैं। प्रदर्शन के नाम पर पुलिस पर हमला, उनके वाहन जलाना अथवा उनकी जान को खतरे में डालना केवल किसी व्यक्ति पर हमला नहीं, बल्कि राज्य की विधिक व्यवस्था और कानून के शासन को चुनौती देना है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 08-08-26

डिजिटल भुगतान प्रणाली टिकाऊ बने

संपादकीय

लोक सभा ने गुरुवार को कराधान एवं अन्य कानून (संशोधन) विधेयक, 2026 पारित किया, जिसमें भुगतान एवं निपटान प्रणाली अधिनियम, 2007 में संशोधन का भी प्रस्ताव है। इससे केंद्र सरकार को यह तय करने का अधिकार मिलेगा कि इलेक्ट्रॉनिक भुगतान के कौन से माध्यम निःशुल्क रहेंगे और किन पर शुल्क लागू हो सकते हैं। हालांकि विधेयक में किसी शुल्क, दर या समयसीमा का उल्लेख नहीं है, फिर भी यह शून्य मर्चेंट डिस्काउंट रेट (एमडीआर) व्यवस्था पर पुनर्विचार करने के लिए कानूनी लचीलापन प्रदान करता है और संभावित रूप से कुछ एकीकृत भुगतान इंटरफेस (यूपीआई) लेनदेन पर एमडीआर लागू करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। इस प्रस्ताव ने इस बहस को फिर से हवा दे दी है कि क्या भारत की डिजिटल भुगतान अवसंरचना, जो विश्व में सर्वश्रेष्ठ में से एक है, शून्य शुल्क मॉडल के तहत अनिश्चित काल तक संचालित हो सकती है। डिजिटल अपनाने को प्रोत्साहित करने के लिए यूपीआई और रुपे डेबिट कार्ड जनवरी 2020 से ही एमडीआर से मुक्त हैं। यूपीआई वर्तमान में प्रतिदिन लगभग 66 करोड़ लेनदेन प्रोसेस करता है, जिससे रेहड़ी-पटरी वालों से लेकर बड़े खुदरा विक्रेताओं तक सभी के लिए निर्बाध भुगतान संभव हो पाता है, और यह भारत के डिजिटल भुगतान की रीढ़ बन गया है।

डिजिटल लेनदेन उपयोगकर्ताओं और व्यापारियों के लिए निःशुल्क हैं, लेकिन इनका संचालन निःशुल्क नहीं है। बैंक, भुगतान सेवा प्रदाता, भुगतान एग्रीगेटर और भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम (एनपीसीआई) बुनियादी ढांचे के रखरखाव, उन्नयन और सुरक्षा का खर्च वहन करते रहते हैं। इसलिए इसके टिकाऊपन का मुद्दा अनदेखा करना मुश्किल है। इस वर्ष की शुरुआत में प्रस्तुत वित्त संबंधी स्थायी समिति की 32वीं रिपोर्ट में बताया गया कि सरकार की प्रोत्साहन योजना उद्योग की वास्तविक लागत का केवल 11 फीसदी और सामान्य एमडीआर व्यवस्था से उत्पन्न होने वाले राजस्व का 14 फीसदी ही वहन कर पाती है।

केंद्रीय बजट में इस वर्ष कम मूल्य वाले यूपीआई और रूपे लेनदेन को बढ़ावा देने के लिए लगभग 2,000 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं, लेकिन उद्योग का अनुमान है कि भुगतान प्रणाली के संचालन और विस्तार के लिए इससे कहीं अधिक की आवश्यकता है। यूपीआई से उपयोगकर्ताओं की संख्या में वृद्धि होने की संभावना है, इसलिए सरकारी सब्सिडी पर निरंतर निर्भरता दीर्घकालिक बुनियादी ढांचे के निवेश को सीमित कर सकती है। इसी कारण उद्योग निकायों और विश्लेषकों ने बड़े व्यापारियों और उच्च मूल्य वाले लेनदेन तक सीमित, एक सुसंगत एमडीआर की वकालत की है। विश्लेषकों के अनुमानों से पता चलता है कि 2,000 रुपये से अधिक के यूपीआई लेनदेन पर 15-30 आधार अंकों (बीपीएस) की एमडीआर वित्त वर्ष 2028 तक सालाना लगभग 5,000 करोड़ से 10,000 करोड़ रुपये दिला सकती है।

गौरतलब है कि 2,000 रुपये से अधिक के लेनदेन कुल लेनदेन संख्या का केवल 4-5 फीसदी है, लेकिन लेनदेन मूल्य का लगभग 70 फीसदी हैं। इससे पता चलता है कि लक्षित एमडीआर अधिकांश उपयोगकर्ताओं को प्रभावित किए बिना वित्तीय स्थिरता में सुधार कर सकता है। अंतरराष्ट्रीय अनुभव से भी पता चलता है कि शून्य एमडीआर ही डिजिटल भुगतान की सफलता का एकमात्र मार्ग नहीं है। उदाहरण के लिए, ब्राजील की फिक्स और चीन की रियल टाइम भुगतान प्रणालियां 30-40 बीपीएस के कारोबारी शुल्क पर संचालित होती हैं, जिससे भुगतान प्रदाताओं को डिजिटल भुगतान को जारी रखते हुए अपनी लागत वसूल करने में मदद मिलती है। इसके अलावा, यह ध्यान देने योग्य है कि लगभग 90 फीसदी यूपीआई लेनदेन केवल दो थर्ड पार्टी ऐप के माध्यम से होते हैं, जिससे लगभग एकाधिकार की स्थिति बन जाती है। राजस्व के मामले में एक स्थायी व्यावसायिक वातावरण प्रतिस्पर्धा को बढ़ाएगा और अधिक ऑपरेटरों को आकर्षित करेगा। व्यापक नीतिगत स्तर पर, यह महत्त्वपूर्ण होगा कि भविष्य का एमडीआर ढांचा सरल बना रहे नीतिगत प्राथमिकता भारत की डिजिटल भुगतान अवसंरचना में निरंतर निवेश सुनिश्चित करना होनी चाहिए, जिससे लेनदेन लागत कम रखने में मदद मिलेगी और कम मूल्य वाले लेनदेन के साथ भेदभाव नहीं होगा।

जनसत्ता

Date: 08-08-26

जवाबदेही का दायरा

संपादकीय

पिछले कई दिनों से संसद में जिस तरह का गतिरोध कायम है, दोनों सदनों को बार-बार स्थगित करने की नौबत सामने आ रही है, उसका हल निकालने को लेकर औपचारिक बयानों के अलावा सरकार की ओर से कोई गंभीर कोशिश होती नहीं दिख रही है। सवाल यह है कि अगर एक ही मुद्दे यानी नीट प्रश्नपत्र लीक पर विरोध जताने वाले प्रदर्शनकारियों के प्रति पुलिस के बेलगाम रवैये पर विपक्षी दल जवाबदेही स्पष्ट करने की मांग कर रहे हैं, तो इससे किस तरह की आपत्ति हो सकती है। यह सही है कि प्रश्नपत्र लीक के मुद्दे पर विरोध का दायरा व्यापक होते जाने के बाद तत्कालीन केंद्रीय शिक्षा मंत्री ने आखिर इस्तीफा दिया। मगर इस मसले पर विरोध प्रदर्शन में हिस्सा लेने वाले विद्यार्थियों पर दिल्ली पुलिस ने जिस तरह बेरहमी से लाठीचार्ज किया, बड़ी संख्या में छात्र-छात्राओं को चोट पहुंची, उसके लिए विपक्षी दल संसद में गृहमंत्री से जवाब की मांग कर रहे हैं। हैरानी की बात यह है कि इस संदर्भ में सरकार की ओर से जिस तरह विपक्ष की इस मांग को प्रकारांतर से खारिज किया जा रहा है, वह साफतौर पर जवाबदेही से बचने की ही कोशिश है !

यह स्थिति तब है, जब राज्यसभा के सभापति के रूप में उपराष्ट्रपति सीपी राधाकृष्णन ने भी गुरुवार को संसदीय कार्यमंत्री किरेन रिजीजू से कहा कि वे गृहमंत्री को सदन में बुलाने के अनुरोध पर विचार करें। मगर इस संदर्भ में कोई सकारात्मक प्रतिक्रिया देने के बजाय विपक्षी सांसदों के प्रदर्शन को सरकार की ओर से 'ड्रामा' बताया गया। सवाल है कि इस तरह का रुख रखते हुए सरकार क्या यह दावा करने की स्थिति में है कि वह किसी भी मुद्दे पर उठे विवाद का हल संवाद या बातचीत के जरिए निकालने को तैयार है। कहने को किरेन रिजीजू ने परिसीमन के मुद्दे पर विपक्ष के नेता राहुल गांधी से बातचीत करके समर्थन मांगा, लेकिन वहां भी प्रस्तावित विधेयकों पर सर्वदलीय बैठक बुलाने की मांग पर सहमति नहीं बन पा रही है। सरकार अगर किसी भी मुद्दे पर विपक्षी दलों की उपेक्षा कर या उनकी राय को दरकिनार कर एकतरफा तौर पर अपनी मर्जी के मुताबिक कोई हल निकालने के बारे में सोच रही है, तो इसे कैसे देखा जाएगा ?

एक तरफ सरकार अपनी सुविधा से संवाद का स्वरूप तय करना चाहती है या फिर इसकी जरूरत को गैर-महत्त्वपूर्ण मानती है, दूसरी ओर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत स्पष्ट तौर पर बातचीत करने को ही प्राथमिक और लोकतंत्र का तकाजा मानते हैं। गौरतलब है कि मुंबई में नई पीढ़ी के बच्चों के साथ बातचीत के दौरान भागवत ने यह अहम टिप्पणी की कि 'जेन-जी' देश- विरोधी नहीं हैं और विरोध प्रदर्शन भी संवाद का वैध तरीका तथा लोकतंत्र में सहमति बनाने का एक जरिया है। इस क्रम में अलग-अलग विचार एक साथ आते हैं और चर्चा के बाद आम सहमति बनती है। इस समूचे मसले को इतनी स्पष्टता के साथ भागवत ने जिस तरह देखा है, उसे लोकतंत्र का जीवन-तत्त्व माना जाना चाहिए। इसके बावजूद यह समझना मुश्किल है कि सरकार के भीतर इस मामले में एक विचित्र आग्रह क्यों दिखता है। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि नीट प्रश्नपत्र लीक होने के मुद्दे पर विद्यार्थियों के विरोध प्रदर्शन के साथ एक अहम बिंदु यह उभरा है कि सरकार की किसी नीति पर सवाल उठाने पर आम जनता के खिलाफ सख्ती बरतने के बजाय जवाबदेही लेने, जवाब देने और संवाद करने से ही लोकतंत्र बचेगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 08-08-26

पेपर लीक का सच

संपादकीय

नीट-यूजी 2026 पेपर लीक मामले में केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) ने ज्यादा समय लिए बगैर आरोप पत्र दाखिल कर दिया है। सीबीआई ने साफ कर दिया कि यह लीक अचानक नहीं हुई, इसके लिए आरोपियों ने बहुत सोच-समझकर साजिश रची थी। गहरी साजिश के तहत परीक्षा लेने वाली एजेंसी एनटीए में सेंधमारी की गई थी और

तीन विशेषज्ञों को साजिश में शामिल कर लिया गया था। अब तो नाम ही सामने आ गए हैं कि रसायन विज्ञान के लिए पीवी कुलकर्णी, भौतिक विज्ञान के लिए मनीषा संजय हवलदार और वनस्पति विज्ञान व प्राणी विज्ञान के लिए मनीषा गुरुनाथ मंधारे को साजिशकर्ताओं ने अपने साथ मिला लिया था। दिल्ली की एक अदालत में दाखिल किए गए करीब 20,000 पन्नों के आरोपपत्र में आरोपियों का पूरा कच्चा-चिट्ठा खोल दिया गया है। अब विशेष रूप से गठित फास्ट ट्रैक अदालत से यह उम्मीद की जाएगी कि वह आरोपपत्र पर पूरी गति से काम करे। यथोचित सुनवाई हो और दोषियों को ऐसे दंडित किया जाए कि मिसाल बन जाए।

पेपर लीक के मामले पूरे देश में सामने आए हैं और जिनसे देश की शिक्षा पर दाग लगे हैं। इतना बड़ा आंदोलन हुआ है और देश के शिक्षा मंत्री को भी इस्तीफा देना पड़ा है। नीट-यूजी परीक्षा से खिलवाड़ करने वालों ने केवल छात्रों को ही नहीं, बल्कि देश को भी धोखा दिया है। कोई संदेह नहीं कि परीक्षा से जुड़े लोगों पर कड़ी निगरानी की जरूरत है, उनके प्रति किसी भी स्तर पर नरमी बरतना ठीक नहीं है। इस पेपर लीक मामले में जांच से पता चला है कि आरोपी विशेषज्ञों को अनुवाद/पुनः अनुवाद प्रक्रिया के दौरान रफ वर्क के लिए गोपनीय अनुभाग के अंदर ही सादे कागज उपलब्ध कराए गए थे। प्रमुख आरोपी पीवी कुलकर्णी ने इन कागजों का इस्तेमाल छोटी-छोटी पर्चियों पर रसायन विज्ञान के 135 प्रश्नों और उनके उत्तरों को संक्षेप में लिखने के लिए किया। इतना ही नहीं, गोपनीय अनुभाग से यह आरोपी अपने लिखे हुए कागज के साथ आसानी से बाहर भी आ गया। इससे पता चलता है, एनटीए से जुड़े विशेषज्ञों पर कड़ाई की पूरी व्यवस्था नहीं थी। अगर संभव हो, तो अब परीक्षा होने तक ऐसे विशेषज्ञों को गोपनीय अनुभाग से बाहर नहीं आने देना चाहिए। उनके रहने, काम करने की पूरी व्यवस्था अलग से सुनिश्चित होनी चाहिए। किसी भी स्थिति में नीट-यूजी परीक्षा में 20 लाख से ज्यादा छात्र बैठते हैं, इतनी बड़ी परीक्षा की एक कीमत एनटीए और उसके विशेषज्ञों को देश के लिए जरूर चुकानी चाहिए। अब एनटीए में वही लोग नियुक्त होने चाहिए, जो गोपनीयता से किसी भी तरह का समझौता न करें। गौरतलब है कि आरोपपत्र में बताया गया है, एनटीए के गोपनीय अनुभाग में प्रवेश और निकास के दौरान विशेषज्ञों की कोई तलाशी नहीं ली गई।

सीबीआई ने यह भी बताया है कि वह पिछले साल नवंबर में आठ छात्रों द्वारा बनाए गए फीफा वर्ल्ड कप 2026 नाम के एक वाट्सएप ग्रुप की मदद से आरोपियों तक पहुंची है। पेपर लीक में पुणे की ब्यूटीशियन की भूमिका हो या एक दंत चिकित्सा क्लिनिक की, धोखाधड़ी की कोई भी कड़ी बचनी नहीं चाहिए। एक-एक आरोपी को पकड़ने और उनके साथ यथोचित तरीके से निपटने की जरूरत है। जिस तेजी से सीबीआई ने इस जांच को अंजाम दिया है, उसी तेजी से आगे भी कार्रवाई करने की जरूरत है। देश में जो भी पेपर लीक के मामले हाल के महीनों में सामने आए हैं, उनकी भी सीबीआई को जांच करनी चाहिए, ताकि दूध का दूध और पानी का पानी हो जाए।

Date: 08-08-26

हमारे लोकतंत्र को ऐसे दबाव समूह चाहिए

संजय कुमार, (प्रोफेसर, सीएसडीएस)

भारत के हालिया इतिहास पर नजर डालें, तो पता चलता है कि कुछ आंदोलन सफल राजनीतिक पार्टियों में तब्दील हो गए, मगर कुछ सफल तो हुए, पर राजनीतिक दल नहीं बन पाए, वहीं कुछ आंदोलन बहुत सफल नहीं हो सके।

कॉकरोच जनता पार्टी (सीजेपी) द्वारा शुरू किए गए हालिया युवा आंदोलन (जिसे जेन-जी आंदोलन कहा जा रहा है) की सफलता को इस आधार पर नहीं आंका जाना चाहिए कि यह आंदोलन अंततः एक राजनीतिक पार्टी बन पाता है या नहीं। सीजेपी आंदोलन की सफलता को कम उम्र के छात्रों की उत्साहपूर्ण स्वत:स्फूर्त भागीदारी से मापा जाना चाहिए। यह भागीदारी एक ऐसे मुद्दे के लिए थी, जो सीधे उनसे जुड़ा है। इसकी सफलता ने नौजवानों को यह भरोसा सौंपा है कि वे अपनी जायज मांगों के लिए सरकार तक अपनी बात पहुंचा सकते हैं, भले ही यह मांग किसी गैर-राजनीतिक मंच से उठाई गई हो।

हर सफल विरोध-प्रदर्शन या आंदोलन के बाद यह सवाल लाजिमी तौर पर पूछा ही जाता है कि क्या यह आंदोलन किसी नई राजनीतिक पार्टी में ढलने जा रहा है? हमारे पास ऐसे कई उदाहरण हैं, जिनमें विरोध आंदोलन सफल राजनीतिक दल बने और कई नहीं बन पाए। करीब चार दशक पहले 'ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन' (आसू) के नेतृत्व में असम में छात्रों का आंदोलन असम गण परिषद (अगप) में बदल गया। इस पार्टी ने 1985 में असम में सरकार भी बनाई; इसने 35.2 प्रतिशत वोट शेयर के साथ 111 सीटों में से 65 सीटें जीत ली थीं। इसी तरह, 'इंडिया अगेंस्ट करप्शन' आंदोलन भी एक राजनीतिक दल आम आदमी पार्टी (आप) में बदल गया। इस पार्टी का राजनीतिक सफर बेहद सफल रहा है, साल 2013 से लेकर 2025 के विधानसभा चुनाव में हारने तक।

इंडिया अगेंस्ट करप्शन आंदोलन ने न सिर्फ भारी भीड़ जुटाई, बल्कि आप को बड़े पैमाने पर चुनावी समर्थन भी मिला। साल 2015 और 2020 के विधानसभा चुनावों के दौरान 54.3 प्रतिशत और 53.5 फीसदी वोट शेयर के साथ उसने दिल्ली विधानसभा की कुल 70 में से 67 और 62 सीटें जीतीं। भले ही आप 2025 का विधानसभा चुनाव हार गई, लेकिन उसका वोट शेयर अब भी 43.5 प्रतिशत पर बना हुआ है। इसने पंजाब में 2022 का विधानसभा चुनाव जीतकर वहां भी अपनी सरकार बनाई। यह युवा मतदाताओं के व्यापक समर्थन के साथ एक आंदोलन के राजनीतिक दल में बदलने की सफलता की कहानी है।

गौर कीजिए, साल 2015 के विधानसभा चुनाव में 18 से 22 साल के आयु वर्ग के मतदाताओं के बीच आप को 63 प्रतिशत वोट मिले थे, जो उसके औसत वोट शेयर की तुलना में लगभग 10 फीसदी अधिक था। इसी तरह 2020 में इस आयु वर्ग के मतदाताओं के बीच उसे 60 प्रतिशत वोट मिले, जो औसत वोट शेयर की तुलना में सात प्रतिशत अधिक था। असम में अगप और दिल्ली-पंजाब में आप की सफलता की कहानी में युवाओं ने अहम भूमिका निभाई; उन्होंने न केवल आंदोलन को, बल्कि पार्टी के चुनावी समर्थन को भी मजबूत आधार दिया।

यह नहीं भूलना चाहिए कि ऐसे कई सफल सामाजिक आंदोलन रहे हैं, जो राजनीतिक पार्टी के तौर पर नाकाम रहे। उत्तराखंड को अलग राज्य बनाने का आंदोलन कई सालों तक लोगों के एक समूह ने चलाया था; बाद में उन्होंने 'उत्तराखंड क्रांति दल' (यूकेडी) नाम की राजनीतिक पार्टी बनाई, पर चुनावों में उसका कोई खास असर नहीं पड़ा। उत्तराखंड बनने के ठीक बाद 2002 में हुए पहले विधानसभा चुनाव में यूकेडी को 5.4 प्रतिशत वोट मिले। वह सिर्फ चार सीटें ही जीत पाया। बाद के चुनावों में इसका वोट समर्थन और सीटें दोनों सिमटती चली गईं।

कुछ आंदोलन ऐसे भी हुए, जो राजनीतिक दलों के नेतृत्व में विभिन्न सामाजिक समुदायों से जुड़े रहे और जिसके परिणामस्वरूप केंद्र की सरकार बदल गई। सन् 1977 के जयप्रकाश नारायण के आपातकाल-विरोधी आंदोलन के कारण शक्तिशाली इंदिरा गांधी सरकार का पतन हुआ, तो वीपी सिंह के नेतृत्व में बोफोर्स आंदोलन की वजह से राजीव गांधी के नेतृत्व वाली अब तक की सबसे लोकप्रिय सरकार को उखाड़ फेंका गया था। उस सरकार में कांग्रेस को 415 लोकसभा सीटें और 48.1 फीसदी वोट मिले थे।

इस बात की बहुत चिंता नहीं होनी चाहिए कि सीजेपी अंततः कोई राजनीतिक पार्टी बनती है या नहीं, क्योंकि सभी सफल आंदोलनों का राजनीतिक पार्टी में बदलना आवश्यक नहीं है। इसने बड़ी संख्या में लोगों को यह उम्मीद दी है कि अगर व्यवस्थित और तरीके से एकजुट होकर आवाज उठाई जाए, तो उसे सुनने के लिए बाध्य किया जा सकता है। इसने यह उम्मीद भी जगाई है कि एजेंडा या मुद्दा महत्वपूर्ण है, न कि पार्टी नेतृत्व।

सीजेपी ने फिलहाल दबाव समूह के रूप में ही काम करने का फैसला किया है। दबाव समूह चुनाव लड़े बिना सरकार के फैसलों को प्रभावित करने की कोशिश करते हैं। अमेरिका में 'नेशनल एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ कलर्ड पीपल' (एनएएसीपी) ने कानूनी कार्रवाई और नागरिक अधिकारों के लिए लोगों को एकजुट करके 'सिविल राइट्स ऐक्ट 1964' और 'वोटिंग राइट्स ऐक्ट 1965' को लागू करवाने में मदद की।

ब्रिटेन में 'स्टोनवॉल' ने एलजीबीटी+ अधिकारों के लिए अभियान चलाया और 'सेक्शन 28 को हटाने, सेना में इस समुदाय के लोगों पर लगी रोक को खत्म कराने और इंग्लैंड व वेल्स में समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता दिलाने में योगदान दिया। 'ग्रीनपीस' ने सरकारों पर पर्यावरण से जुड़े कड़े नियम अपनाने के लिए दबाव डाला है। अमेरिका का एक हालिया उदाहरण 'ब्लैक लाइव्स मैटर' आंदोलन है, जिसने आगे चलकर नस्लीय भेदभाव के खिलाफ अलग-अलग तरीकों से काम करने वाला एक समूह बनाया। ये उदाहरण दिखाते हैं कि दबाव समूह जन-

अभियानों का इस्तेमाल कर सरकारों को फैसले बदलने या निर्णय लेने के लिए कैसे मजबूर कर सकते हैं। दबाव समूह लोकतंत्र में काफी कारगर भूमिका निभाते हैं।